# नई पाठ्यपुस्तकें

## विज्ञान को लेकर एक जड़ नजरिया

सुशील जोशी

राजस्थान पाठ्यपुस्तक मंडल की विज्ञान की कक्षा 6, 7 व 8 की पुस्तकों को देखने का अवसर मिला। पढ़ने बैठा तो लगा कि नहीं पढ़ पाऊंगा। एक तरफ राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 की दुहाई और दूसरी तरफ जानकारी ठूंसने की ललक ने इन किताबों को अपठनीय बना दिया है, समझने की बात तो दूर की है।

यहां कक्षा 6 की किताब पर चर्चा कर रहा हूं। इसके 'प्राक्कथन' व 'शिक्षक के लिए' खंड में कहा गया हैः

1. समस्त शिक्षण प्रक्रियाओं के केंद्र में बालक है।
2. सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार हो कि बालक स्वयं अपने अनुभवों के आधार पर समझ कर ज्ञान का निर्माण करे।
3. पाठ्यपुस्तक सरल, सुगम, सुरुचिपूर्ण, सुग्राह्य एवं आकर्षक हो।
4. ज्ञान तक पहुंचने का अर्थ है अन्य व्याख्याओं एवं मानक ज्ञान तथा सूचनाओं के साथ अपना स्वयं का संवाद स्थापित कर पाना।
5. विज्ञान की प्रमुख विषयवस्तुओं को प्रयोगाधारित, क्रियाविधि आधारित एवं संवाद के रूप में तैयार किया गया है।
6. विज्ञान की विषयवस्तुओं को विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है जिसके अवलोकन, जिज्ञासा, वर्गीकरण, विभेदीकरण, विश्लेषण, निष्कर्ष प्रतिपादन आदि विभिन्न चरणों को यथास्थान सम्मिलित किया गया है।

### कुछ अच्छी बातें

किताबों को पढ़कर लगता है कि हम बहुत आगे नहीं बढ़े हैं। मगर इनमें कुछ अच्छी बातें भी हैंः

1. प्रूफ रीडिंग की गलतियां बहुत कम हैं।
2. छपाई साफ-सुथरी है। (मैंने पाया कि कक्षा 8 की पुस्तक तक पहुंचते-पहुंचते छपाई की स्थिति बिगड़ती गई है)
3. अधिकांश चित्रों में देखकर पता चल जाता है कि वह किस चीज का चित्र है।
4. छपाई रंग-बिरंगी है हालांकि कहीं-कहीं रंगों की वजह से भीड़भाड़ का एहसास होता है।

लेकिन मेरा संबंध तो विषयवस्तु तथा उसके प्रस्तुतीकरण से है। प्रस्तुतीकरण से आशय यह है कि क्या विषयवस्तु को इस तरह प्रस्तुत किया गया है कि वह बच्चों को विषय की अवधारणाओं को समझने में मदद करे और साथ-साथ उनमें विज्ञान के तौर-तरीकों की समझ भी पैदा करे। क्या प्रस्तुतीकरण बच्चों को उपरोक्त बिंदु क्रमांक 6 में वर्णित चरणों का रसास्वादन और उनका अभ्यास करने का अवसर देता है?

## विषयवस्तु

मुझे नहीं लगता कि इस मामले में कोई आम सहमति है कि कौन-सी विषयवस्तु, कौन-सी अवधारणा, कौन-सा कौशल, विधि का कौन-सा पक्ष विद्यार्थी किस उम्र में सीख सकते हैं। हर बारी यह लेखकों के विवेक का निर्णय होता है कि वे किस कक्षा में कौन-सी विषयवस्तु को शामिल करेंगे।

इतना कहने के बाद यह कहना भी जरूरी है कि चाहे हर बिंदु पर आम सहमति न हो मगर एक मोटी-मोटी समझ तो बनी है कि किस कक्षा के बच्चों को क्या पढ़ाया जाए। जाहिर है आप प्लाज्मा अवस्था को पहली कक्षा में नहीं पढ़ाएंगे। तो निर्णय करना होगा कि पदार्थ की इस चौथी अवस्था के बारे में किस कक्षा में पढ़ाएं। यह निर्णय करने के आधार क्या होंगे?

क्या निर्णय 'बालक को केंद्र' में रखकर लिया जाएगा? क्या इस निर्णय का आधार विषय का मौजूदा ज्ञान होगा? क्या इस निर्णय का आधार ज्ञान की क्रमबद्धता होगी? या क्या निर्णय का आधार यह होगा कि किसी छात्र को सम्बंधित विषय का पारंगत बनने के लिए या आगे अध्ययन जारी रखने के लिए किस विषयवस्तु से परिचित हो जाना आवश्यक है? क्या ऐसे निर्णय करते वक्त यह ध्यान में रखा जाएगा कि विद्यार्थी उस विषयवस्तु को समझने के लिए जरूरी चीजें सीख चुका है या तैयार हो चुका है। क्या यह भी सोचना जरूरी है कि क्या उस कक्षा में बच्चे के लिए वह ज्ञान सार्थक रूप से उसके शेष ज्ञान के साथ जुड़कर ज्ञान में गुणात्मक वृद्धि करेगा? एक कक्षा की पाठ्यपुस्तक बनाते समय ऐसे निर्णय कई बार लेने होते हैं।

पहले यह देख लें कि पाठ्यपुस्तक में प्लाज्मा अवस्था के बारे में क्या कहा गया है।

''पदार्थ की यह अवस्था वास्तव में संतृप्त गैसीय अवस्था मानी जाती है। यह अवस्था गर्म आयनित पदार्थ के रूप में पाई जाती है। सूर्य, तारों, ट्यूब लाइट, टीवी की पिक्चर ट्यूब आदि में प्लाज्मा अवस्था पाई जाती है। इस अवस्था पर शोध कार्य जारी है। इसके बारे में आप अगली कक्षाओं में अध्ययन करेंगे।''

आम तौर पर पदार्थ की तीन अवस्थाएं पढ़ाई जाती हैं। बालक को केंद्र में रखेंगे तो चौथी अवस्था को जोड़ने की कोई जरूरत नहीं है। हां, विषय (कौन-सा विषय?) की संपूर्णता की दृष्टि से शायद प्लाज्मा की बात करना जरूरी लगे। मगर कम से कम भौतिक शास्त्र में सामान्य अध्ययन के दौरान आपको प्लाज्मा अवस्था को अपने विश्लेषण में नहीं जोड़ना पड़ता। सामान्य अवलोकन में यह अवस्था प्रकट होती नहीं। ट्यूब लाइट वगैरह का नाम ले देने भर से यह अवस्था घनिष्ठता के दायरे में नहीं आ जाती। क्योंकि यदि ऐसा होता तो शकर नाम का जाप करने भर से आपको सहसंयोजी बंधन, कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन के परमाणु, हाइड्रोजन बंधन आदि स्पष्ट नजर आना चाहिए। बल्कि यह कहना कि ट्यूब लाइट में प्लाज्मा अवस्था पाई जाती है, भ्रामक है। कहां है ट्यूब लाइट में प्लाज्मा अवस्था? क्या जब ट्यूब लाइट बुझी होती है तब प्लाज्मा अवस्था मौजूद होती है या सिर्फ तब प्रकट होती है जब ट्यूब लाइट जलती है। अभी तो विद्यार्थियों को यह तक नहीं मालूम कि ट्यूब लाइट और तापदीप्त बल्ब में रोशनी पैदा होने की क्रिया में क्या फर्क है।

यह भी देखना होगा कि क्या उक्त परिभाषा कोई अर्थ संप्रेषित करती है या कोई छवि निर्मित करने में मदद करती है। आयन, आयनीकरण, आयनित वगैरह से छात्रों का परिचय हुआ नहीं है और अगले कुछ वर्षों में होने वाला नहीं है। ऐसे में यह कहना कि ''संतृप्त गैसीय अवस्था मानी जाती है। यह अवस्था गर्म आयनित पदार्थ के रूप में पाई जाती है" बेमानी है। इसमें से कोई सार्थक बिंब नहीं उभरता। मुहावरे में कहें तो यह थोथा चना बाजे घना की मिसाल है। लेखक बताना चाहते हैं कि वे विज्ञान की नवीनतम जानकारी के जानकार हैं।

मैंने इस उदाहरण पर काफी समय व्यतीत इसलिए किया क्योंकि पूरी किताब ऐसे ही उदाहरणों से भरी पड़ी है।

संक्षेप में कहा जाए, तो इस पुस्तक में विषयवस्तु को सम्मिलित करते हुए न तो बालक को केंद्र में रखा गया है और न ही विषय की प्रकृति को।

*पाठ्यपुस्तक लेखकों ने इन वाक्यों का आशय यह निकाला कि जैसे पूजा-पाठ, हवन वगैरह में किया जाता है, उस तरह की कुछ प्रक्रिया अपनाई जाए। यजमान को बैठा दिया जाता है और फिर ब्राह्मण मंत्र बोलता है और समय-समय पर यजमान को अपने नाम का उच्चारण करने, कोई वस्तु हवन कुंड में अर्पित करने, हाथ धोने, नमस्कार करने वगैरह के निर्देश देता चलता है। इस पूरी प्रक्रिया का परिणाम यह होता है कि हवन सम्पन्न हो जाता है, यजमान को विश्वास हो जाता है कि जिस उद्देश्य से हवन किया गया था, उसमें सफलता मिलेगी। लगभग यही स्थिति चर्चित पाठ्यपुस्तक की भी है। बल्कि उससे भी बुरी है।*

## सम्मिलित करने के बाद

जैसा कि मैंने पहले ही कहा था, विषयवस्तु के चयन के कोई स्पष्ट वस्तुनिष्ठ आधार नहीं हैं और प्रायः यह विवेकाधीन होता है। तो मानकर चल सकते हैं कि इस पुस्तक के लेखकों ने सोच समझकर ही निर्णय लिए होंगे। हालांकि इस पुस्तक में कई ऐसी विषयवस्तु को स्थान मिला है, जिसे एनसीईआरटी ने काफी विचार-विमर्श के बाद कक्षा 6-8 के स्तर से हटाने का फैसला लिया है। जैसे परमाणु संरचना को कक्षा 6-8 से हटाकर कक्षा 9 में स्थान देना इसी प्रकार का निर्णय है। बहरहाल, एनसीईआरटी भी कोई अविवादित कसौटी नहीं है मगर इतना जरूर है कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के निर्माण में काफी गहन विचार-विमर्श हुआ है और कई लोगों की इसमें भागीदारी रही है।

सवाल यह है कि एक बार किसी विषयवस्तु को शामिल करने के निर्णय के बाद उसके साथ क्या किया जाए। प्राक्कथन का तकाजा है कि सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार हो कि बालक स्वयं अपने अनुभवों के आधार पर समझ कर ज्ञान का निर्माण करे। ज्ञान तक पहुंचने का अर्थ है अन्य व्याख्याओं एवं मानक ज्ञान तथा सूचनाओं के साथ अपना स्वयं का संवाद स्थापित कर पाना। विज्ञान की विषयवस्तुओं को विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाए जिसके अवलोकन, जिज्ञासा, वर्गीकरण, विभेदीकरण, विश्लेषण, निष्कर्ष प्रतिपादन आदि विभिन्न चरणों को यथास्थान सम्मिलित किया जाए।

मैं स्वीकार करता हूं कि हो सकता है मैंने इन लक्ष्यों को समझने में भूल की हो। जैसे जब मैंने इन्हें पढ़ा तो माना कि किसी विषयवस्तु को इस तरह पढ़ाया जाएगा कि विद्यार्थी अवलोकन, वर्गीकरण, विभेदीकरण, विश्लेषण, निष्कर्ष प्रतिपादन वगैरह करेंगे। मैंने यह भी सोचा कि इसमें विज्ञान की कुछ प्रमुख चीजों को यथास्थान नहीं मिला है। जैसे परिकल्पना बनाना और परिकल्पना की जांच करके उसे स्वीकार करना या खारिज करना। मेरी भूल थी कि मैंने मान लिया कि पाठ्यपुस्तकों और शिक्षण प्रक्रिया का लक्ष्य बच्चों को इनके अभ्यास के अवसर देना होगा।

पाठ्यपुस्तक लेखकों ने इन वाक्यों का आशय यह निकाला कि जैसे पूजा-पाठ, हवन वगैरह में किया जाता है, उस तरह की कुछ प्रक्रिया अपनाई जाए। यजमान को बैठा दिया जाता है और फिर ब्राह्मण मंत्र बोलता है और समय-समय पर यजमान को अपने नाम का उच्चारण करने, कोई वस्तु हवन कुंड में अर्पित करने, हाथ धोने, नमस्कार करने वगैरह के निर्देश देता चलता है। इस पूरी प्रक्रिया का परिणाम यह होता है कि हवन सम्पन्न हो जाता है, यजमान को विश्वास हो जाता है कि जिस उद्देश्य से हवन किया गया था, उसमें सफलता मिलेगी। लगभग यही स्थिति चर्चित पाठ्यपुस्तक की भी है। बल्कि उससे भी बुरी है। उक्त सारे तत्वों का 'डिमॉन्स्ट्रेशन' भी ठीक ढंग से नहीं किया गया है।

## अवलोकन

सबसे पहले अवलोकन की स्थिति को देखते हैं। मैं बहुत सारे उदाहरण प्रस्तुत नहीं करूंगा पर विश्वास कीजिए यहां प्रस्तुत उदाहरण आम परिस्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं। कुछ उल्लेखनीय अपवाद हैं जिनकी चर्चा भी की गई है।

---

1. इस बात की चिंता न करें कि छात्र अभी नहीं जानते कि प्रजाति क्या होती है क्योंकि उन्हें करना तो कुछ है नहीं।
2. क्लोरोफिल अणु निकल गए या नहीं इसे जानने का तरीका अप्रासंगिक ही है। वास्तव में इस बात का फैसला कैसे होगा?

**उदाहरण 1 (अध्याय 2, पादपों में पोषण, गतिविधि 1)**

**एक ही प्रजाति[1] के पौधों के दो गमले लीजिए। एक गमले को 72 घंटे के लिए अंधकार में तथा दूसरे गमले को सूर्य के प्रकाश में रखिए। दोनों गमलों से एक-एक पत्ती लीजिए। दोनों पत्तियों को एक परखनली में डालकर इतना स्प्रिट भरिए कि वे डूब जाएं। इस परख नली को पानी से आधे भरे बीकर में रखकर तब तक गर्म कीजिए जब तक कि पत्तियों में सभी क्लोरोफिल अणु[2] नहीं निकल जाएं। अब इन पत्तियों को जल से धोकर इन पर आयोडीन विलयन की कुछ बूंदें डालिए।**

**क्या दोनों पत्तियों के रंग में परिवर्तन होता है?**

***हम देखेंगे कि सूर्य के प्रकाश में रखे पौधे की पत्ती के रंग में तो परिवर्तन होता है लेकिन अंधेरे में रखे पौधे की पत्ती के रंग में परिवर्तन नहीं हुआ।* (आड़ा-तिरछा मैंने किया है।)**

तो विद्यार्थियों को अवलोकन करना नहीं है, सुनना/पढ़ना है।

क्या उन्हें पता है कि यह गतिविधि क्यों करना है या क्यों पढ़ना है? जी हां, यह गतिविधि यह पता करने के लिए है कि ''क्या सूर्य के प्रकाश की अनुपस्थिति में भी प्रकाश संश्लेषण क्रिया होती है।''

सवाल है कि इस गतिविधि से कैसे पता चलेगा। दरअसल यह गतिविधि तो तब सार्थक होगी जब आप प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को किसी अन्य तरीके से देख चुके हों। पूरी बात तो यह है कि पौधे अपना भोजन स्वयं बनाते हैं। इस प्रयोग को पढ़ने के बाद मेरे दिमाग में हमेशा यह सवाल आता है कि आलू में खूब स्टार्च पाया जाता है (आलू को काटकर उस पर आयोडीन के घोल की कुछ बूंदें डालकर देख लीजिए) और आलू जमीन के नीचे अंधेरे में रहता है। तो वहां अंधेरे में स्टार्च का संश्लेषण हुआ होगा। यदि स्टार्च की उपस्थिति ही इस बात का सूचक है कि वह स्टार्च उसी जगह बना है, तो आलू में स्टार्च की व्याख्या कौन करेगा। पौधे अपना भोजन स्वयं बनाते हैं इस बात की जांच सिर्फ पत्तियों पर ही क्यों की गई?

खैर मैं यहां सिर्फ इस बिंदु को रेखांकित करना चाहता हूं कि अधिकांश गतिविधियों के बाद सारे अवलोकन तत्काल लिखकर बता दिए गए हैं। लिहाजा, अवलोकन करने की कोई जरूरत नहीं है। और इस संभावना को भी पूरी तरह निरस्त कर दिया गया है कि अवलोकनों में विविधता हो सकती है। हां, कुछ अपवाद जरूर हैं, जहां अपेक्षा की गई है कि विद्यार्थी स्वयं अवलोकन करेंगे।

प्रकाश संश्लेषण वाला प्रयोग वैसे भी काफी मुश्किल है, शायद अवलोकन बताकर अच्छा ही किया। स्प्रिट मिलना बहुत कठिन काम है। मगर कई अत्यंत साधारण अवलोकन करने की छूट भी विद्यार्थियों को नहीं दी गई है। एक उतावलापन और संदेह है। शायद बच्चे देख ही न पाएं, शायद देखकर भी अनदेखा कर दें, या कहीं ऐसा न हो कि शिक्षक गतिविधि करवाने की जहमत न उठाएं। ऐसा हो गया तो 'सीखना' कैसे संभव होगा। इसलिए सारे अवलोकन लिख दिए गए हैं।

**उदाहरण 2 : (अध्याय 3, वस्तुओं की प्रकृति, गतिविधि 5)**

**कांच की प्याली में लकड़ी का बुरादा और आलपिन लीजिए और उसके पास चुंबक लाइए। आप क्या देखते हैं? (और इससे पहले कि कोई देख पाए) *आप देखेंगे कि आलपिन चुंबक की ओर आकर्षित होती है जबकि लकड़ी का बुरादा नहीं।* अतः हम कह सकते हैं कि आलपिन चुंबकीय है और लकड़ी का बुरादा अचुंबकीय है।**

और अब एक उदाहरण देखते हैं जहां बच्चों को वास्तव में गतिविधि न करने देकर निष्कर्ष थोपने का परिणाम घोर अवैज्ञानिक रहा है।

*घोर अविश्वास पर टिकी है यह प्रक्रिया जिसका उद्देश्य बताया गया है कि "सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार हो कि बालक स्वयं अपने अनुभवों के आधार पर समझ कर ज्ञान का निर्माण करे"। ज्ञान का निर्माण करना तो दूर बालक तो अवलोकन भी नहीं कर रहा है। उससे भी बुरी बात यह है कि उसे बार-बार बताया जा रहा है कि पहले से पता है कि क्या दिखने वाला है, इसलिए अंतिम सत्य को स्वीकार कर लेने में ही भलाई है।*

**उदाहरण 3 : (अध्याय 10, गतिविधि, खंड 10.3 दूरी का मापन)**

**विद्यार्थियों को बताया जाता है कि "प्राचीन काल में एक स्थान से दूसरे स्थान की दूरी कदमों में नापते थे। छोटी दूरियों को अंगुलियों और बालिश्त में नापते थे। क्या यह मापन सही था? आओ पता लगाएं।"**

**इसके बाद उनसे उनकी विज्ञान की पुस्तक को अंगुलियों तथा से.मी. में और कबड्डी के मैदान की लंबाई व चौड़ाई को कदमों तथा मीटर में नापने को कहा जाता है। तालिकाएं बनाई जाती हैं जिनमें प्रत्येक विद्यार्थी के दोनों नाप लिखे जाते हैं। फिर कहा जाता है:**

**"उपर्युक्त सारणी का अवलोकन कीजिए। हम देखते हैं कि प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा कदमों द्वारा मापी गई लंबाई व चौड़ाई भिन्न-भिन्न आती है जबकि मीटर में नापी गई लंबाई व चौड़ाई सभी विद्यार्थियों की समान है।"**

**शायद लेखकों ने कभी इसे करके नहीं देखा है। और शायद वे मापन के बारे में एक बुनियादी बात भी नहीं जानते हैं मापन में घट-बढ़। यदि जानते होते तो या तो यह गतिविधि न करते या बच्चों को मौका देते कि वे मीटर-से.मी. में मापी गई लंबाइयों में घट-बढ़ की धारणा पर विचार कर सकें।**

घोर अविश्वास पर टिकी है यह प्रक्रिया जिसका उद्देश्य बताया गया है कि "सिखाने की प्रक्रिया इस प्रकार हो कि बालक स्वयं अपने अनुभवों के आधार पर समझ कर ज्ञान का निर्माण करे"। ज्ञान का निर्माण करना तो दूर बालक तो अवलोकन भी नहीं कर रहा है। उससे भी बुरी बात यह है कि उसे बार-बार बताया जा रहा है कि पहले से पता है कि क्या दिखने वाला है, इसलिए अंतिम सत्य को स्वीकार कर लेने में ही भलाई है।

## कुछ अपवाद

उक्त सामान्य ढांचे के कुछ अपवाद भी हैं। जैसे विद्युत परिपथ (अध्याय 14) में विद्युत परिपथ बनाने के बाद चालक और कुचालक की पहचान वाले प्रयोग (गतिविधि 4) में वाकई विद्यार्थियों को कई वस्तुओं की जांच परिपथ में लगा-लगाकर करने को कहा गया है और सम्बंधित तालिका को खुला रखा गया है, जिसमें विद्यार्थी अपने अवलोकन लिखेंगे।

## वर्गीकरण

यह तो सर्वमान्य बात है कि वर्गीकरण और समूहीकरण करना विज्ञान की एक प्रमुख गतिविधि है। वर्गीकरण करके आप परिभाषाएं विकसित करते हैं, आपको गुणधर्मों के पैटर्न दिखते हैं, गुणधर्मों को समझने के लिए मसाला मिलता है, वस्तुओं के बीच के अंतर्सम्बंध दिखते हैं और इनके आधार पर उन अंतर्सम्बंधों की व्याख्या की शुरुआत होती है। जरा देखें बालकों को वर्गीकरण के कैसे अभ्यास करवाए गए हैं।

यह तो मानना होगा कि एक-दो पाठों में समूहीकरण के काफी अभ्यास करने का मौका बच्चों को दिया गया है। इनमें भोजन के आधार पर समूहीकरण, स्रोत के आधार पर भोजन का वर्गीकरण, वस्तुओं को बनाने में लगने वाले पदार्थों के आधार पर वर्गीकरण, प्राकृतिक-कृत्रिम का वर्गीकरण आदि शामिल हैं। लेकिन ये उदाहरण मात्र दो अध्यायों के हैं। शेष अध्यायों में इस क्रिया का कोई जिक्र नहीं है।

जिन अध्यायों में वर्गीकरण की क्रिया करवाई गई है वहां भी यह मात्र वस्तुओं को परिभाषित करने के लिहाज से करवाई गई है। विभिन्न समूहों के बीच अंतर्सम्बंध की खोज या पैटर्न देखना जैसी चीजें तो पूरी तरह नदारद हैं। वस्तुओं को परिभाषित करना एक महत्वपूर्ण काम है मगर विज्ञान मात्र उतना ही नहीं है।

## विश्लेषण

विश्लेषण का तो नामो निशान नहीं है। विद्यार्थियों द्वारा विश्लेषण तो दूर, लेखकों द्वारा इसका प्रदर्शन भी नहीं किया गया है। तरीका यह है कि कोई प्रश्न रखा जाए, कहा जाए कि अब इसे जानने का प्रयास करेंगे और फिर सारगर्भित उत्तर लिख दिया जाए।

यही उत्तर क्यों मान्य है, क्या किसी वैकल्पिक उत्तर की संभावना है, यदि है तो क्या उसे प्रयोगों, अवलोकनों, तर्कों के आधार पर अस्वीकार किया गया है, जैसी बातें तो विद्यार्थियों को 'कंफ्यूज' करेंगी ऐसा माना जाता है। जिस ढंग से विज्ञापन एजेंसियां काम करती हैं वही तरीका इन पुस्तकों में विज्ञान पढ़ाने पर लागू किया गया है। लेखकों द्वारा रचे गए सवाल हैं और उन्हीं के द्वारा दिए गए जवाब हैं।

उपरोक्त बिंदु क्रमांक 4 (ज्ञान तक पहुंचने का अर्थ है अन्य व्याख्याओं एवं मानक ज्ञान तथा सूचनाओं के साथ अपना स्वयं का संवाद स्थापित कर पाना) के लिए जानबूझकर जगह नहीं छोड़ी गई है।

*विश्लेषण का तो नामो निशान नहीं है। विद्यार्थियों द्वारा विश्लेषण तो दूर, लेखकों द्वारा इसका प्रदर्शन भी नहीं किया गया है। तरीका यह है कि कोई प्रश्न रखा जाए, कहा जाए कि अब इसे जानने का प्रयास करेंगे और फिर सारगर्भित उत्तर लिख दिया जाए। ...जिस ढंग से विज्ञापन एजेंसियां काम करती हैं वही तरीका इन पुस्तकों में विज्ञान पढ़ाने पर लागू किया गया है। लेखकों द्वारा रचे गए सवाल हैं और उन्हीं के द्वारा दिए गए जवाब हैं।*

विश्लेषण का अर्थ होगा कि कोई सवाल सामने है, या कोई अवलोकन किया गया है जिसमें से कोई सवाल निकला है। इसका समाधान करने के तरीकों पर विचार करना, जवाब (परिकल्पना) के सही-गलत होने की कसौटियां तय करना, फिर विभिन्न जवाबों को इन कसौटियों पर परखना, तर्क करना, जरूरी हो तो प्रयोग करना, और अवलोकन करना वगैरह। मगर जब जवाब तय है तो इस सबसे क्या फर्क पड़ता है।

## निष्कर्ष प्रतिपादन

इसका ठीक-ठीक अर्थ शायद यही होगा कि किसी सवाल, समस्या के कारणों को खोजना। यह पता लगाना कि जो कारण बताया जा रहा है वह सही है या नहीं। शायद थोड़े हल्के स्तर पर देखें तो कहेंगे कि अवलोकनों को व्यवस्थित करके पैटर्न खोजना भी निष्कर्ष की श्रेणी में रखा जा सकता है। मगर सारे जवाबों से लैस इस पुस्तक में सारे निष्कर्ष दिए गए हैं, उनका प्रतिपादन करने की न तो कोई जरूरत है और न अहमियत। और तो और निष्कर्ष प्रस्तुत हो जाने के बाद भी कोई गुंजाइश नहीं है कि आप यह कह सकें कि शायद संदेह की जगह है। चाहे विज्ञान के अभ्यासी संदेह को कितना ही महत्वपूर्ण गुण मानते हों, मगर ये किताबें इसको एक अनावश्यक भटकाव ही मानती हैं।

यदि यह मान भी लिया जाए कि निष्कर्षों के प्रतिपादन में बच्चे शरीक नहीं होंगे क्योंकि वह बहुत मुश्किल है, फिर भी इतना तो किया ही जा सकता है कि बच्चों के सामने (उदाहरण के तौर पर) यह प्रस्तुत हो कि निष्कर्ष कैसे निकाले जाते हैं।

## जानकारी

अंततः इन पुस्तकों का एकमात्र मकसद जानकारी देना भर रह जाता है। यह तो नहीं कहा जा सकता कि जानकारी उपलब्ध कराना अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं है। किसी विषय में वर्तमान समय में कुछ मान्य सूचनाएं/नियम/धारणाएं/अवधारणाएं/पद्धतियां/तकनीकें होती हैं जो उस विषय में विश्लेषण का ढांचा प्रस्तुत करती हैं। इनके साथ ही कुछ सवाल होते हैं जिनका समाधान विश्लेषण के इस ढांचे के अंतर्गत किया जाता है। थॉमस कुन इस ढांचे को पैराडाइम कहते हैं। कुन के मुताबिक विज्ञान शिक्षण/प्रशिक्षण का अर्थ विद्यार्थियों को इस पैराडाइम में काम करने को तैयार करना है। यदि विज्ञान शिक्षा के इस उद्देश्य को मान लिया जाए तो इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आज उपलब्ध जानकारियों वगैरह से परिचित कराना विज्ञान शिक्षा का वैध मकसद है। मगर कुन यह भी कहते हैं कि यह शिक्षण/प्रशिक्षण इस तरह होना चाहिए कि विद्यार्थी इस पैराडाइम का उपयोग नए सवालों को

*रोचक बात यह है कि इस पुस्तक में एक अध्याय है दैनिक जीवन में विज्ञान। मैं चाहता हूं कि इसे उद्धृत करके बताऊं कि यह कितना हानिकारक आख्यान प्रस्तुत करता है। ऐसे लापरवाह कथनों को क्या कहिए कि "भारतीय जीवन पद्धति आदि काल से विज्ञान आधारित रही है।" तो फिर राहू-केतु इतनी मजबूती से क्यों जड़े जमाए हैं? क्यों सूर्य व चंद्रग्रहण के समय लोग बाहर नहीं निकलते? क्यों ग्रहणों के समय सूतक लगता है?*

हल करने में कर पाएं। दरअसल कुन के मुताबिक विज्ञान कर्म का उद्देश्य वर्तमान पैराडाइम को नई-नई परिस्थितियों में लागू करके उसे विस्तार देना है।

क्या ये पाठ्यपुस्तकें कुनवादी संदर्भ में फिट बैठती हैं?

## बिखराव

संभवतः इस पुस्तक के अध्याय अलग-अलग लेखकों द्वारा लिखे गए हैं और अंत में किसी संपादक ने उन्हें क्रमिकता की दृष्टि से देखा नहीं है। इसलिए सरल मशीन नामक अध्याय में गुरुत्व बल वगैरह की बात कर ली गई है जबकि बल के बारे में अध्ययन अगले अध्याय में किया जाता है। यह हाल कई जगह है। सूक्ष्मजीवों की चर्चा (अध्याय 8) होने से पहले ही विद्यार्थियों को सूचित कर दिया जाता है कि विषाणु सजीव और निर्जीव की योजक कड़ी हैं (अध्याय 6)। पता नहीं ऐसा क्या मानकर और किस उद्देश्य से किया जाता है। प्रोकैरियोट्स (जीवाणु समेत) और यूकैरियोट्स को भी पहले ही निपटा दिया गया है।

प्रकाश और छाया की बात करते-करते अचानक हम सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण के बारे में पढ़ने लगते हैं। छाया के साथ और भी बहुत कुछ करने को था जिसे छोड़ दिया गया है। जैसे छाया की साइज का वस्तु की साइज से क्या संबंध है, वस्तु और प्रकाश स्रोत की दूरी और वस्तु व पर्दे की दूरी से क्या सम्बंध है, छाया और उपछाया क्यों बनती हैं, क्या छाया रंगीन भी हो सकती है वगैरह।

इस प्रकार की लापरवाही की वजह से जानकारी काफी बिखर गई है।

एक अच्छा प्रयास यह किया गया है कि जगह-जगह पर भारतीय वैज्ञानिकों के योगदान को रेखांकित किया गया है। मगर इसमें थोड़ी ज्यादती हो गई है। एक तो असंबंधित स्थानों पर भारतीय वैज्ञानिक चिपका दिए गए हैं। विज्ञान के मामले में किसी वैज्ञानिक का योगदान उस समय के ज्वलंत सवालों के संदर्भ में ही समझा व आंका जा सकता है। किसी एक वैज्ञानिक को उठाकर यह कह देना पर्याप्त नहीं होता कि "उन्हें भारत के आइंस्टाइन कहना उपयुक्त है।" भौतिकी के मूल कण, बोस-आइंस्टाइन सांख्यिकी, बोस-आइंस्टाइन संघनन, पदार्थ की पांचवीं अवस्था (पहले तो कहा था कि पदार्थ की चार अवस्थाएं होती हैं) वगैरह गूढ़ बातें कक्षा 6 के विद्यार्थियों के मन में क्या बिंब निर्मित कर सकती हैं?

यही स्थिति अन्य वैज्ञानिकों की भी है। आखिर हम इन वैज्ञानिकों की बात करके क्या बताना चाहते हैं। यही ना कि भारतीय वैज्ञानिकों ने भी विज्ञान की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बेहतर होता यदि भारतीय वैज्ञानिकों को लेकर एक अध्याय तैयार किया जाता, जिसमें बताया जा सकता था कि समग्र विज्ञान की हलचल में इनका योगदान क्या रहा। यहां तो विद्यार्थियों को यह पढ़ लेना है कि खुराना ने "प्रोटीन संश्लेषण में न्यूक्लिओटाइड की भूमिका को स्पष्ट किया" अथवा सतीश माहेश्वरी ने "डकवीड (लीमनेसी कुल का सबसे छोटा पुष्पीय पौधा) की एम्ब्रियोलॉजी पर अनुसंधान किया" और "पुंकेसर कल्चर तकनीक का उपयोग... किया।" और तो और उन्होंने 'सिगनल ट्रांसडक्शन मेकेनिज़्म इन प्लांट्स' नामक एक किताब भी लिखी या शिप्रा गुहा मुखर्जी ने "फूलों के पुंकेसर का कल्चर करके अगुणित पादप उत्पादन" का आविष्कार किया। कहीं ऐसा न हो कि बच्चों के लिए इनकी महानता इनकी अबूझता का पर्याय बनकर रह जाए।

## सवालों की प्रकृति

अध्यायों के अंत में विद्यार्थियों के लिए सवाल दिए गए हैं। सभी सवाल पाठ में पढ़ी गई जानकारी को याद करवाने के लिए हैं। इनके उदाहरणों में जाने की जरूरत नहीं है। आखिर कुन के परिप्रेक्ष्य में देखें तो भी एक पैराडाइम को

आत्मसात करने का अर्थ यही है कि आप उसे किसी नई परिस्थिति में लागू कर पाएं, करने की कोशिश कर पाएं। मगर यह पुस्तक ऐसा कोई मौका नहीं देती।

एक सवाल जिसके बारे में मुझे लगा था कि वह काफी सोचने की मांग करता हैः

''परपोषी एवं परजीवी में क्या अंतर है?'' (अध्याय 2, लघु उत्तरात्मक प्रश्न 2)

मगर मुझे बाद में समझ में आया कि यह एक गलतफहमी का शिकार है। यहां परपोषी host के लिए तथा परजीवी parasite के लिए प्रयुक्त किया गया है। वास्तव में मानक शब्दावली के हिसाब से परपोषी का मतलब heterotroph होता है।

जगह-जगह पर गलत सूचनाएं, जानकारियां भी दी गई हैं।

एक बार फिर चंद उदाहरणों का सहारा ले सकते हैं। फूलगोभी को फूल कहना (अध्याय 1, पृ. 5 सारणी 1.4), ''बीजांकुर के पश्चात नवोद्भिद मृदा से विभिन्न तत्वों को अवशोषित कर बड़े होते हैं'' (अध्याय 2, पृ. 11), सरल मशीन और जटिल मशीन की परिभाषा (अध्याय 11, पृ. 94), अध्याय 14 (पृ. 119) पर विद्युत धारा की परिभाषा- जैसे नदी में पानी का प्रवाह होता है जिसे हम जल धारा कहते हैं। उसी प्रकार विद्युत के प्रवाह को विद्युत धारा कहते हैं।

एक उदाहरण और इसका संबंध विज्ञान की विधि के एक महत्वपूर्ण घटक से है मॉडल बनाना। वैज्ञानिक प्रायः यथार्थ का मॉडल बनाकर उसे समझने का प्रयास करते हैं। मॉडल यथार्थ को हूबहू प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि उसके कुछ लक्षणों का प्रतिरूपण होता है।

उदाहरण का संबंध पदार्थ की अवस्थाओं से है (अध्याय 5, आओ पदार्थ को जानें)। इसमें पदार्थ की तीन अवस्थाओं ठोस, द्रव और गैस के बीच अंतर बताते हुए कुछ चित्र पेश किए गए हैं (चित्र क्र. 5.2-ब, 5.3-ब, 5.4-ब और 5. 5)। ये चित्र वास्तव में इन तीन अवस्थाओं के मॉडल्स हैं। इन चित्रों के माध्यम से बताया गया है कि ठोस में कण बहुत पास-पास रहते हैं, द्रवों में थोड़े दूर-दूर रहते हैं और गैसों में बहुत दूर-दूर रहते हैं। मगर इन चित्रों में ठोस, द्रव और गैस अवस्था में समान आयतन में कणों की जो तुलनात्मक संख्याएं बताई गई हैं, वे वास्तविकता से मेल नहीं खातीं। इन चित्रों को देखकर लगता है कि ठोस से द्रव बनते समय आयतन में बहुत अधिक वृद्धि होगी जबकी द्रव से गैस बनते समय इतनी अधिक वृद्धि नहीं होगी। और तो और अलग-अलग चित्रों में कणों की साइज भी बदल गई है। यह अवस्था परिवर्तन की समझ को भ्रमित करने का काम करता है, जो वैसे ही भ्रामक है।

## और अंत में

रोचक बात यह है कि इस पुस्तक में एक अध्याय है दैनिक जीवन में विज्ञान। मैं चाहता हूं कि इसे उद्धृत करके बताऊं कि यह कितना हानिकारक आख्यान प्रस्तुत करता है। ऐसे लापरवाह कथनों को क्या कहिए कि ''भारतीय जीवन पद्धति आदि काल से विज्ञान आधारित रही है।" तो फिर राहू-केतु इतनी मजबूती से क्यों जड़े जमाए हैं? क्यों सूर्य व चंद्रग्रहण के समय लोग बाहर नहीं निकलते? क्यों ग्रहणों के समय सूतक लगता है?

विज्ञान को यदि मात्र कुछ सुविधाएं उत्पन्न करने का साधन मान लिया जाए, तो बात अलग है मगर यदि विज्ञान को लगातार बढ़ते ज्ञान व समझ के रूप में लिया जाए तो एक अलग ही नजरिया उभरता है। इस पुस्तक में विज्ञान का एक जड़ नजरिया पेश किया गया है जो इस गूढ़ वाक्य में कैद हो जाता हैः ''प्रकृति के अन्वेषण एवं उससे प्राप्त सुव्यवस्थित ज्ञान को विज्ञान कहते हैं।" इसमें यह बिलकुल स्पष्ट नहीं होता कि प्रकृति का अन्वेषण कई तरह से संभव है। विज्ञान एक खास तरह का अन्वेषण है जिसकी अपनी विधियां हैं, कसौटियां हैं, सही-गलत के फैसले करने के आधार व तौर-तरीके हैं, आगे बढ़ने के रास्ते हैं और सबसे बड़ी बात कि उसमें ज्ञान के किसी भी पड़ाव पर

पहुंचकर हम सब कुछ जान लेने का दावा नहीं करते और न ही अंतिम सत्य को पाना विज्ञान का मकसद है। और पुस्तक तो इस वाक्य के दूसरे हिस्से (उससे प्राप्त सुव्यवस्थित ज्ञान) को भी ठीक से प्रस्तुत नहीं कर पाई है।

हो सकता है कि आप अपने जीवन में उन सुविधाओं का उपयोग करते हों जो वैज्ञानिक अन्वेषण से उपजी हैं। इससे आपके दृष्टिकोण का कोई सम्बंध नहीं है। और ऐसा भी नहीं है कि इस पुस्तक के लेखक इस बात से अनभिज्ञ हैं। अध्याय 15 (दैनिक जीवन में विज्ञान) में खंड 15.2 (विज्ञान का अध्ययन हमारे लिए क्यों आवश्यक है) से स्पष्ट है कि लेखक इस बात से परिचित हैंः

1. व्यक्ति रूढ़िवादी विचारों से दूर हटता है।
2. व्यक्ति में स्वतंत्र चिंतन की प्रकृति का विकास होता है।
3. अपने आसपास की घटनाओं, समस्याओं, तथा क्रियाकलापों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है।
4. जीवन में आने वाली समस्याओं का क्रमबद्ध ढंग से हल करने की क्षमता विकसित होती है।
5. किसी समस्या का समाधान नहीं होने पर धैर्यपूर्वक असफलता के कारणों को पता लगाकर पुनः कार्य करने की क्षमता का विकास होता है।
6. सत्य, परख (शायद यह शब्द सत्यपरक होगा) एवं अंध विश्वास मुक्त विचारों का दृढ़ीकरण होता है।
7. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है।"

और यह भी बताया गया है कि वैज्ञानिक किस तरह कार्य करते हैंः

''समस्या की पहचान
संबंधित तथ्यों को एकत्रित कर उनका वर्गीकरण करना
परिकल्पना का निर्माण
प्रयोगों द्वारा परिकल्पना की सत्यता की जांच
निष्कर्ष के आधार पर सिद्धांत एवं नियम बनाना।"

दिल पर हाथ रखकर कहिए कि इनमें से किस चीज का विकास इन किताबों का अध्ययन करके होता है या होने की संभावना है। ◆

**लेखक परिचय :** एकलव्य संस्था के साथ लम्बे समय से जुड़े हुए हैं। विज्ञान शिक्षण के प्रति प्रतिबद्धता उनके लेखन एवं शिक्षणशास्त्रीय पद्धतियों में दिखाई देती है। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के साथ जुड़कर भी विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में काफी काम किया है। इस कार्यक्रम में किए गए काम को संदर्भ पुस्तिका 'मिडिल स्कूल रसायन' एवं शिक्षण अनुभवों को 'जश्ने तालीम' किताब में प्रकाशित कर सबके साथ साझा किया है।